सिपाही

विनोद दास

शायद ही कोई इनसे खुश हो
खुद इनकी अपनी आत्मा भी नहीं

घर में पत्नी नाखुश
और बाहर पंसारी
जो उनकी बीवी को उधार देते देते
आ गया है आजिज़

सबको इनसे शिकायत है
किसी को कम
किसी को ज़्यादा

इन्हें देखकर
वे भी बना लेते हैं अपना विकृत चेहरा
जिनका कभी इनसे साबका नहीं पड़ा
और वे भी
जिनकी संतानों को इन्होंने फिरौतीबाज़ों
से बचाया

संसार की कोई भी राजसत्ता
इनकी भुजाओं के बिना नहीं चलती
चाहे बीते समय की राजशाही हो
या आज का कथित लोकतंत्र

इनका इतिहास
दासता का आख्यान है

और वर्तमान भी कहाँ कुछ बदला है

ये हिंसा के मज़दूर हैं

महंगाई के विरोध में शांतिपूर्ण रैली हो
जंगल-ज़मीन बचाने की मुहिम हो
या रोज़ी-रोटी के लिए धरना
अफसर को मुआवज़े की अर्जी देनी हो
या अपने हक़ के लिए सड़क पर
निकलना हो जुलूस
आँखों पर बांधे हुए अनुशासन की पट्टी
वे दीवार की तरह हर ज़गह रहते हैं
मौजूद

इनके पास इतना भी नहीं होता अवकाश
कि धो सकें बू मारती अपनी पीली
बनियाइन
सूराखों भरी जुर्राबें

हुक्म पाते ही हड़बड़ी में
पहन लेते हैं चारखाने वाली गीली
जांघिया
कसते हैं चमड़े की बेल्ट
पहुंच जाते हैं वहां
दुर्भाग्य से जिसे वे कहते हैं
अपनी ड्यूटी

ड्यूटी की हथकड़ियों में बंधे
वे चलाते हैं गोली-डंडा
मारते हैं पानी की बौछार
छोड़ते है आंसू गैस

वह ड्यूटी पर थके हुए जाते हैं
और थके हुए लौटते हैं घर

जी हाँ ! आप सही सोच रहे हैं
यह अंग्रेज़ों की नहीं,हमारी अपनी पुलिस
है
अपने भाई-भतीजे हैं
क़ानून व्यवस्था के नाम पर
पीटते हैं हमें दुश्मन की तरह
जैसे लूटते हैं बेईमान व्यापारी
राष्ट्रवाद के नाम पर

जरा इनकी बचपन की फ़ोटो देखिये

कितनी निर्मल और प्यार से भरी आँखें
हैं इनकी
तब कटी पतंगों को लूटने के लिए
वे अदृश्य पक्षी बनकर उड़ते थे
लट्टू पर घुमाते थे सारा संसार
पाठशाला में इब्राहीम की बिरयानी
बेहिचक बांटकर खाते थे
मकई के लंबे सफ़ेद बाल लगाकर
बनते थे सांताक्लॉज़

यह अब कोई रहस्य नहीं है
कि किस तरह बनाया जाता है इन्हें
धीरे-धीरे क्रूर
बनाया जाता है धीरे-धीरे भ्रष्ट
थोड़ा हिंदू-थोड़ा मुसलमान
धीरे-धीरे बनाया जाता है
बांभन ठाकुर यादव लोध पासी बाल्मीकि

धीरे-धीरे वे रह जाते हैं कम पुलिस
मनुष्य तो और भी कम

फ़िलहाल कथित मुजरिमों के
वे वैधानिक संहारक हैं

इनसे ईमानदारी का आग्रह करना
इनके प्रति हिंसा होगी
इतनी कम मिलती है पगार

बेईमानी इनके लिए सबसे बड़ी नैतिकता
है

वे अक्सर मुफ़्त चाय पीते हैं
और बदले में
होटल में बालश्रम करते बच्चे को देखकर
आँखें मूद लेते हैं

वे अक्सर ऑटों में मुफ़्त बैठते हैं
और ऑटो चालक को
ज़्यादा सवारी बैठने की छूट देते हैं

असमय बूढ़ी हो गयी इनकी बेटी से
कोई जल्दी शादी नहीं करना चाहता
कोई जल्दी अपना मकान इनको किराये
पर नहीं देना चाहता

कॉलेज में उसकी मीठी फब्तियों पर
जो लड़की बिंदास उसे कभी झिड़क देती
थी
कभी फिस्स से हँस देती थी उसकी शेरो-
शायरी पर
अब सड़क पर अचानक उसे वर्दी में
देखकर
थर्रा कर रुँध जाती है उसकी आवाज़

समाज में ताक़तवर दिखते
ये हिंदी फिल्मों के लिए मसखरे हैं

इनके लिए प्रणय एक बुरा सपना है
जैसे कर्फ़्यू में खोजना नमक
स्त्रियों के सपनों में वे आते हैं
डर की तरह

जीभ की तरह
पैंट से निकली बाहर कमीज़
और बढ़ी तोंद से कमीज़ के खुले बटनों
के लिए
इनके परिष्कार की चर्चा कागजों पर खूब
होती है
हालांकि सत्ता के लिए यह बारहा स्थगित
काम है

शासकों की सामंती दुनिया में
झूठा आश्वासन ही उनका कथ्य है
और भाषा से खेलना शिल्प

उनके लिए वह जाले भरी किसी गंदी
बैरक में
खूंटी पर टंगी एक पुरानी खाकी वर्दी है
जिस पर जमी धूल दंगों के बाद
कचहरी में संविधान की किताब की तरह
कभी-कभी झाड़ ली जाती है

अपनी पीड़ा के लॉकअप में बंद
आपकी शरीफ़ ज़बान में
वह टुल्ला
नशे की घूँट में घुलाता है हर चिपचिपी
शाम
अपनी आत्मा पर लदा अपराधबोध
सौगात में मिली
दिन भर की घृणा और बेहिसाब डंक

लड़खड़ाते हुए
बेसुरी आवाज़ में गुनगुनाता है
पुरानी फिल्म का कोई उदास गाना
और घुर्र-घुर्र करते पंखें के नीचे सो जाता
है बेसुध
कमर झुकी बीवी के बगल में
मौत की तरह

अपने बेरोजगार बेटे के लिए
गालियां ही उसका प्यार है
अगर्चे रोजगार के रेगिस्तान में
जब उसका बेटा भरता है सिपाही भर्ती
का फॉर्म
वह चिंदी-चिंदी कर उसे उड़ा देता है
खिड़की के बाहर
खुली हवा में

श्रम

जुझारूपन की पूर्ति संसाधनों से नहीं हो सकती

सीटू किसी दौर में श्रमिकों का बहुत जुझारु संगठन रहा है

एस्कॉर्ट यूनियन के माध्यम से एचएमएस की ओर मेरे बढने से पहले 'सीटू' संस्मरण का उल्लेख करना जरूरी समझता हूं। इमरजेंसी हटने और जनता पार्टी की सरकार बनने के तुरंत बाद जब सीटू का विस्तार होने लगा तो सीटू ज़िला कमेटी में दिल्ली स्थित हाई कमान से आदेश आया कि गेडोर यूनियन के तत्कालीन प्रधान के नेतृत्व में गेडोर यूनियन को 'सीटू' से पुनः एफ़िलिएट करने पर ज़िला कमेटी विचार करे। उस वक्त मैं भी उसका सदस्य होता था। ज़िला कमेटी ने सर्वसम्मति से प्रस्ताव को नकार दिया। कारण यह बताये गये कि इमरजेंसी-कॉल में दिवान गांधी की गतिविधियां पार्टी एवं 'सीटू' विरोधी रही थीं। लेकिन शीघ्र ही आला कमान से आदेश आया कि इस पर पुनर्विचार किया जाय तथा साथ में इशारा भी दे दिया गया कि दिवान को सीटू से जोड़ना है।

कारण यह बताया गया था कि गेडोर 3000 से अधिक मज़दूरों वाली एक बड़ी यूनियन है। इसके जुड़ने से 'सीटू' की स्थिति हर प्रकार से सुदृढ होगी। लिहाजा ज़िला कमेटी ने न चाहते हुए भी सर्वसम्मत्ति से गेडोर यूनियन को एफ़िलिएशन देकर दिवान गांधी को ज़िला कमेटी में शामिल कर लिया गया। जाहिर है इससे ज़िला कमेटी की आर्थिक स्थिति मज़बूत होने के साथ-साथ पूरे क्षेत्र में सीटू की बल्ले-बल्ले होने लगीं। लेकिन गेडोर का गुब्बारा बहुत समय तक फूला न रह सका और कुछ समय पश्चात फूट गया।

सरकारी एवं प्रबन्धन की नीतियों के चलते कम्पनी बंद होने लगी तो मज़दूरों के हिसाब का मसला आया। मज़दूर चाहते थे कि कम्पनी कानून के हिसाब से मज़दूरों का भुगतान करके उन्हें फारिग करे जबकि कम्पनी उन्हें औने-पौने में निपटाना चाहती थी। इस मौके पर जब मज़दूरों ने यूनियन नेतृत्व को कम्पनी के साथ खड़े पाया तो 'गृह युद्ध' की सी स्थिति बन गयी। मज़दूर दो धड़ों में बंट गये। जम कर खूनी संघर्ष होने लगा- मज़दूरों का जान-माल का नुक्सान होने लगा, झूठे पुलिस केस बनाये जाने लगे। मालिकान सब कुछ बेच कर निकल लिये और मज़दूर आज भी हिसाब के लिये धक्के खा रहे हैं। यहां एक विशेष बात यह भी सामने आई कि मज़दूरों के एक बहुत बड़े ग्रुप ने बिना यूनियन के सीधे कम्पनी से बात-चीत करके एवं कानूनी लड़ाई लड़ कर बेहतर हिसाब पाया।

साधन सम्पन्न एवं भारी-भरकम यूनियन का यह हश्र तो होना ही था। क्योंकि ट्रेड यूनियन सम्बन्धी मौलिक समझदारी की कमी ही नहीं वह पूरी तरह नदारद रही। गौरतलब यह भी है कि ज़िला कमेटी की समझदारी आला कमान से बेहतर थी जिसने गेडोर को अपने साथ लेने से मना कर दिया था। इतना ही नहीं इस मुद्दे को लेकर कुछ समय बाद ज़िला कमेटी में फूट भी पड़ गयी थी।

अब चलते हैं फ़रीदाबाद की सबसे बड़ी यूनियन होने का गौरव हासिल कर चुकी 'आल एस्कॉर्टस इम्प्लाइज़ यूनियन' की ओर। इसका गठन इमरजेंसी से पूर्व हो चुका था लेकिन इमरजेंसी के चलते इसकी गतिविधियां काफ़ी हद तक दबी रहीं। 1977 में इसके संस्थापक प्रधान बने थे बीरम सिंह जिनके नेतृत्व में यूनियन ने दिसम्बर 1977 में मैनेजमेंट से पहला समझौता किया था। इसके बाद कार्यकारिणी द्वारा कुछ समय के लिये गोसाईं नामक एक मज़दूर को प्रधान पद सौंपा गया। करीब 12000 मज़दूरों वाली यह यूनियन किसी एक कारखाने तक सीमित न रह कर एस्कॉर्ट के छोटे-बड़े सात-आठ प्लांटों तक फैली हुई थी, बल्कि एक प्लांट तो नोयडा के पास सूरजपुर में था जहां यामाहा मोटर साइकिल बनती थी। यहां समझदारी यह रखी गयी थी कि जब कम्पनी एक है तो यूनियन क्यों न एक हो!

इस बड़ी एवं एकीकृत यूनियन के अस्तित्व में आने से पहले भी कम्पनी के लगभग सभी प्लांटों में एक से अधिक यूनियन थीं यानी हर प्लांट में एटक, सीटू, इन्टक और न जाने क्या-क्या नाम से रंग-बिरंगे झंडे गेटों पर लगे थे। लेकिन खास बात यह थी कि इनमें से किसी भी यूनियन का प्रधान कम्पनी का मज़दूर न होकर बाहरी पेशेवर नेता ही गेट तक आकर भाषण दिया करते थे। कम्पनी ने मज़दूरों के लिये 'वर्क्स कमेटी' नाम से एक नकली सा ढांचा जरूर खड़ा कर रखा था जो मज़दूरों की नुमायंदगी करते हुए प्रबन्धन से बात-चीत करती थी। परन्तु वास्तव में उसके पल्ले कुछ नहीं था, न तो उस कमेटी के लोग प्रबन्धन के सामने बोल सकते थे और न ही प्रबन्धन उनको कोई भाव देते थे। इन हालात को देखते हुए 'ऑल एस्कॉर्टस इम्प्लाइज यूनियन' का गठन हुआ।

गोसाईं के कुछ दिन प्रधान रहने के बाद बैलेट पेपर के माध्यम से यूनियन का चुनाव कराया गया। जिसमें सुभाष सेठी को प्रधान पद के लिये खड़ा किया और भारी बहुमत से जिताया। इसी दौरान यहां सागर राम गुप्ता भिवानी से वकालत करने आया करते थे। वे बहुत अच्छे लेबर लॉ वकील तो थे परन्तु ट्रेडयूनियनिस्ट नहीं थे। एस्कॉर्ट यूनियन गठन के वक्त उनका यूनियन में अच्छा-खासा प्रभाव भी था। इसी के चलते उन्होंने सेठी की जगह खुद प्रधान बनने का प्रयास भी किया था जिसे संगठन ने यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया कि कोई बाहरी व्यक्ति प्रधान नहीं बन सकता।

हां, बदले में उनकी बात मानते हुए यूनियन को हरे झंडे वाली एनएलओ (नेशनल लेबर ऑर्गेनाइजेशन) से जरूर एफ़िलिएट कर दिया। यह झंडा सागर राम जी गुजरात से लाये थे। इसे गुजरात के कुछ ट्रेड यूनियन विरोधी लोग़ों ने महात्मा गांधी के तथाकथित सिद्धांतों पर बनाया था। कुछ समय तक एस्कॉर्ट के गेटों पर एनएलओ का हरा झंडा लहराता रहा तथा यूनियन का दफ़्तर भी गुप्ता जी के नीलम चौक स्थित कार्यालय से ही चलता रहा। लेकिन यह गठजोड़ बहुत दिनों तक चलने वाला नहीं था और टूट गया। यूनियन ने गुप्ता जी के कार्यालय से 20 दुकानें छोड़ कर एक दुकान किराये पर ले ली। जिसे बाद में खरीद लिया और बगल वाली एक और दुकान को भी खरीद कर धीरे-धीरे नीलम फ़्लाई ओवर की बगल में दिखाई देने वाले शानदार दफ़्तर का निर्माण कर लिया।

अलग दफ़्तर खोलने के बाद भी कुछ समय तक तो यूनियन ने एनएलओ से नाता बनाये रखा लेकिन धीरे-धीरे इसे तोड़ने की तैयारी भी करते रहे। इस तैयारी में यूनियन नेताओं ने समाजवादी खेमे की ओर बढना शुरू किया। इसी तैयारी के दौर में सुषमा स्वराज, जार्ज फ़र्नांडिस, मधु दंडवते व सुरेन्द्र मोहन जैसे राजनेताओं से सम्पर्क बढाया जाने लगा।

होते-होते वह दिन आ गया जब तिकोना पार्क स्थित वैष्णु देवी मंदिर में सुष्मा स्वराज के नेतृत्व वाली बैठक में एचएमएस से एफ़िलिएट करने का निर्णय ले लिया गया। उस बैठक में मैं खुद भी मौजूद था। उस वक्त तक फ़रीदाबाद में एचएमएस को कोई नहीं जानता था। लिहाज़ा एस्कॉर्ट यूनियन के माध्यम से ही एचएमएस ने इस औद्योगिक नगरी में प्रवेश पाया था।

(सम्पादक : मजदूर मोर्चा)